



छत्तीसगढ़ की जनजातीय ज्ञान परम्परा एवं ग्रामीण प्रबंधन: एक अध्ययन

ORIGINAL ARTICLE



Authors

डॉ. रूचि सिंह

प्रबंधन संकाय

महात्मा गांधी चित्रकूट, ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट, सतना, मध्य प्रदेश, भारत

डॉ. पुरुषोत्तम सिंह

प्रबंधन संकाय

कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं
जनसंचार विश्वविद्यालय
रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

श्रद्धा तिवारी

शोध छात्रा, समाजकार्य विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग विश्वविद्यालय
चित्रकूट, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

छत्तीसगढ़ अपनी समृद्ध जैव-विविधता, विस्तृत वन क्षेत्र तथा बहुल जनजातीय आबादी के कारण भारत में विशिष्ट सांस्कृतिक एवं पारंपरिक ज्ञान का महत्वपूर्ण केंद्र है। राज्य की जनजातीय समुदायों ने प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व की दीर्घकालीन प्रक्रिया में कृषि, वानिकी, जल-संरक्षण, औषधीय वनस्पतियों, पशुपालन, खाद्य-संग्रह, हस्तशिल्प तथा सामाजिक संगठन से संबंधित विविध प्रकार के स्थानीय ज्ञान का विकास किया है। यह ज्ञान मुख्यतः मौखिक परंपरा, अनुभव, अनुकरण तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण के माध्यम से संरक्षित रहा है। छत्तीसगढ़ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जनजातीय ज्ञान की भूमिका केवल सांस्कृतिक संरक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन, आजीविका-सुरक्षा, खाद्य-आत्मनिर्भरता और पर्यावरण-संतुलन से भी गहराई से जुड़ी है। विशेष रूप से बस्तर, सरगुजा, जशपुर, कांकेर, नारायणपुर, दंतेवाड़ा तथा कोण्डागांव जैसे क्षेत्रों में कृषि, लघु वनोपज, पारंपरिक औषधीय ज्ञान तथा सामुदायिक संसाधन प्रबंधन ग्रामीण जीवन के महत्वपूर्ण आधार हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार छत्तीसगढ़ में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 78.22 लाख थी, जो राज्य की कुल जनसंख्या का लगभग 30.62 प्रतिशत है। राज्य के 85 विकासखंड आदिवासी विकासखंड के रूप में चिन्हित हैं। इस तथ्य से स्पष्ट है कि जनजातीय ज्ञान को समझे बिना छत्तीसगढ़ के ग्रामीण विकास एवं प्रबंधन की समग्र समझ संभव नहीं है। जनजातीय ज्ञान को पिछड़ी या अप्रासंगिक परंपरा के रूप में देखने के स्थान पर उसे स्थानीय विकास, सतत कृषि, जैव-विविधता संरक्षण और सहभागी ग्रामीण प्रबंधन की आधारभूत संपदा के रूप में पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द

जनजातीय ज्ञान, लोकज्ञान, ग्रामीण प्रबंधन, छत्तीसगढ़, पारंपरिक कृषि, वन प्रबंधन.

प्रस्तावना

भारत की सांस्कृतिक संरचना में जनजातीय समाज का महत्वपूर्ण स्थान है। जनजातीय समुदायों का जीवन प्राकृतिक पर्यावरण से अत्यंत निकटता से जुड़ा रहा है। प्रकृति उनके लिए केवल आर्थिक संसाधन नहीं बल्कि जीवन, संस्कृति, आस्था और सामाजिक व्यवस्था का आधार रही है। इसी सहजीवी संबंध के परिणामस्वरूप स्थानीय पर्यावरण, वनस्पतियों, जल-स्रोतों, कृषि पद्धतियों और पशु-पक्षियों के संबंध में व्यापक अनुभवजन्य ज्ञान विकसित हुआ।

छत्तीसगढ़ इस दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। राज्य का लगभग 65.12 प्रतिशत क्षेत्र अनुसूचित क्षेत्र के अंतर्गत आता है तथा 2011 के आंकड़ों के अनुसार राज्य में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 78.22 लाख थी। राज्य में गोंड, मुरिया, माड़िया, हल्बा, बैगा, कंवर, उरांव, कमार, पहाड़ी कोरवा आदि अनेक जनजातीय समुदाय निवास करते हैं।

इन समुदायों की जीवन पद्धति में स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, पारंपरिक कृषि में स्थानीय बीजों का संरक्षण, मिश्रित फसलें, फसल-चक्र, जैविक खाद तथा वर्षा आधारित कृषि के अनुभवजन्य तरीके पाए जाते हैं। इसी प्रकार वन-आधारित जीवन में फल, कंद-मूल, औषधीय वनस्पति, महुआ, तेंदूपत्ता, हर्रा, बहेरा, आंवला आदि लघु वनोपज का महत्वपूर्ण स्थान है। अतः जनजातीय ज्ञान परम्परा को ग्रामीण प्रबंधन से अलग करके नहीं देखा जा सकता। यह ज्ञान स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों के संरक्षण और उपयोग के बीच संतुलन स्थापित करने का कार्य करता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता

आधुनिक विकास-प्रक्रिया ने ग्रामीण जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन किए हैं, लेकिन इसके साथ पारंपरिक ज्ञान के क्षरण की समस्या भी सामने आई है। युवा पीढ़ी का पारंपरिक व्यवसायों से दूर होना, वनों पर बढ़ता दबाव, बाजार आधारित अर्थव्यवस्था, जलवायु परिवर्तन तथा पारंपरिक ज्ञान के व्यवस्थित दस्तावेजीकरण का अभाव इस ज्ञान-परम्परा के लिए चुनौती है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अस्थिर एवं विनाशकारी संग्रहण-पद्धतियाँ कुछ महत्वपूर्ण वनस्पतियों की उपलब्धता को प्रभावित कर रही हैं। इसलिए जनजातीय ज्ञान का अध्ययन केवल अतीत के संरक्षण का विषय नहीं, बल्कि भविष्य के सतत ग्रामीण विकास का विषय भी है।

अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- छत्तीसगढ़ की जनजातीय ज्ञान परम्परा की प्रकृति एवं स्वरूप का अध्ययन करना।
- जनजातीय समुदायों के पारंपरिक कृषि ज्ञान का विश्लेषण करना।
- वन एवं लघु वनोपज प्रबंधन में स्थानीय ज्ञान की भूमिका को समझना।
- पारंपरिक जल एवं प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की पद्धतियों का अध्ययन करना।
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जनजातीय ज्ञान की उपयोगिता का विश्लेषण करना।
- आधुनिक ग्रामीण विकास योजनाओं और पारंपरिक ज्ञान के बीच समन्वय की संभावनाओं का अध्ययन करना।
- जनजातीय ज्ञान के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध-पद्धति

प्रस्तुत शोध मुख्यतः वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। इनमें सरकारी रिपोर्ट, जनगणना संबंधी आंकड़े, शोध-पत्र, जनजातीय अध्ययन, कृषि एवं वानिकी संबंधी साहित्य तथा उपलब्ध अकादमिक सामग्री सम्मिलित हैं।

छत्तीसगढ़ की जनजातीय ज्ञान परम्परा

1. मौखिक ज्ञान परम्परा

जनजातीय ज्ञान का एक प्रमुख गुण उसका मौखिक स्वरूप है। परिवार, समुदाय और बुजुर्गों के माध्यम से बच्चों एवं युवाओं को खेती, जंगल, औषधीय पौधों, पशुपालन, मौसम तथा सामाजिक व्यवहार से संबंधित ज्ञान प्राप्त होता है। यह ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा अनुभव आधारित होता है। किसी पौधे की उपयोगिता, बीज बोने का उपयुक्त समय, वर्षा की संभावना, मिट्टी की प्रकृति अथवा जंगल से किसी वनस्पति को किस प्रकार एकत्र करना है, इन विषयों में लंबे अनुभव से प्राप्त स्थानीय ज्ञान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

2. पारंपरिक कृषि ज्ञान

छत्तीसगढ़ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि का केंद्रीय स्थान है। जनजातीय कृषकों द्वारा स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुरूप विकसित कृषि-पद्धतियों में धान के साथ विभिन्न दलहन, तिलहन, सब्जियों तथा अन्य फसलों का मिश्रण दिखाई देता है।

पारंपरिक कृषि ज्ञान में निम्न तत्व उल्लेखनीय हैं:

- स्थानीय एवं देशी बीजों का संरक्षण।
- मिश्रित एवं बहुफसली खेती।
- जैविक खाद का उपयोग।
- वर्षा के स्थानीय संकेतों की पहचान।
- स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल फसल चयन।
- कृषि एवं पशुपालन का समन्वय।
- कृषि-अवशेषों का पुनः उपयोग।

बस्तर क्षेत्र में पारंपरिक कृषि ज्ञान पर हुए अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि जनजातीय कृषक पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक तकनीक का मिश्रित उपयोग कर रहे हैं। यह तथ्य महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे स्पष्ट होता है कि पारंपरिक और आधुनिक ज्ञान को परस्पर विरोधी मानने के बजाय दोनों के बीच उपयोगी समन्वय विकसित किया जा सकता है।

वन प्रबंधन एवं जनजातीय ज्ञान

छत्तीसगढ़ की जनजातीय अर्थव्यवस्था में वन का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वन से भोजन, औषधि, ईंधन, पशुचारा, निर्माण सामग्री और आय के साधन प्राप्त होते हैं। राज्य के वनों में स्थानीय समुदायों द्वारा लंबे समय से विभिन्न वनस्पतियों के उपयोग एवं प्रबंधन की परम्परा रही है। दक्षिण सरगुजा के एक अध्ययन में स्थानीय समुदायों द्वारा अनेक खाद्य एवं औषधीय वनस्पतियों के उपयोग तथा उनके प्रबंधन का दस्तावेजीकरण किया गया।

वन प्रबंधन में जनजातीय ज्ञान के प्रमुख तत्व हैं:

- मौसम के अनुसार वनोपज संग्रह।
- पौधों के पुनर्जनन की आवश्यकता को ध्यान में रखना।
- उपयोगी वृक्षों एवं पौधों की पहचान।
- फल, बीज, जड़ एवं पत्तियों का स्थानीय उपयोग।
- सामुदायिक स्तर पर प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग।
- धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण।

इस संदर्भ में छत्तीसगढ़ की वन नीति में भी स्थानीय लोगों, विशेषकर जनजातीय समुदायों को वन संरक्षण, पुनर्जीवन एवं लघु वनोपज के सतत संग्रह से जोड़ने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

लघु वनोपज और ग्रामीण अर्थव्यवस्था

लघु वनोपज जनजातीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार है। महुआ, तेंदूपत्ता, हर्रा, बहेरा, आंवला, इमली, साल बीज, चिरौंजी आदि अनेक उत्पाद स्थानीय परिवारों को खाद्य एवं आर्थिक सुरक्षा प्रदान करते हैं।

लघु वनोपज का महत्व तीन स्तरों निम्नानुसार है:

1. **खाद्य सुरक्षा:** वन से प्राप्त कंद-मूल, फल एवं अन्य खाद्य पदार्थ ग्रामीण परिवारों को वैकल्पिक खाद्य स्रोत प्रदान करते हैं।
2. **आय:** वनोपज की बिक्री ग्रामीण परिवारों की नकद आय का स्रोत बनती है।
3. **सामुदायिक अर्थव्यवस्था:** वनोपज के संग्रहण, प्रसंस्करण और विपणन से स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं।

इस प्रकार लघु वनोपज का प्रबंधन ग्रामीण विकास नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा होना चाहिए।

पारंपरिक औषधीय ज्ञान

जनजातीय समाज में स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा स्थानीय वनस्पतियों पर आधारित रहा है। विभिन्न समुदायों में जड़ी-बूटियों, वृक्षों की छाल, पत्तियों, जड़ों, बीजों तथा फलों के औषधीय उपयोग की परम्परा मिलती है।

जशपुर क्षेत्र में किए गए अध्ययन ने जनजातीय समुदायों के औषधीय पौधों संबंधी ज्ञान को दस्तावेजीकृत किया है। इसी प्रकार छत्तीसगढ़ की पारंपरिक स्वास्थ्य पद्धतियों पर एक समीक्षा में अनेक औषधीय वनस्पतियों के पारंपरिक उपयोग का उल्लेख मिलता है। यह ज्ञान आधुनिक चिकित्सा का विकल्प मात्र नहीं है, बल्कि जैव-विविधता और स्थानीय संस्कृति से जुड़ी महत्वपूर्ण बौद्धिक संपदा भी है इसलिए इसके संरक्षण के साथ-साथ जैव-संसाधनों के व्यावसायिक उपयोग में स्थानीय समुदायों के अधिकार एवं लाभ-साझेदारी को सुनिश्चित करना आवश्यक है।

पारंपरिक जल प्रबंधन

ग्रामीण प्रबंधन में जल का विशेष महत्व है। छत्तीसगढ़ के अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में तालाब, डबरी, छोटे जल-स्रोत, नालों और पारंपरिक जल-संरचनाओं का स्थानीय उपयोग किया जाता रहा है। जनजातीय समुदायों का जल संबंधी ज्ञान मुख्यतः स्थानीय भूगोल एवं वर्षा के अनुभव पर आधारित है। वर्षा के समय, मिट्टी की जलधारण क्षमता, जल के प्रवाह और कृषि की आवश्यकताओं की स्थानीय समझ जल प्रबंधन में सहायक रही है। आज जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा और भूजल पर बढ़ते दबाव के कारण पारंपरिक जल संरक्षण तकनीकों का वैज्ञानिक पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है।

सामाजिक संगठन एवं ग्रामीण प्रबंधन

जनजातीय समाज में सामुदायिक निर्णय-प्रक्रिया ग्रामीण प्रबंधन की महत्वपूर्ण विशेषता है। सामूहिक श्रम, सामुदायिक निर्णय, पारंपरिक नेतृत्व तथा पारस्परिक सहयोग ग्रामीण जीवन को संगठित करते हैं।

ग्रामीण स्तर पर सामूहिक श्रम का उपयोग:

- कृषि कार्य।
- घर निर्माण।
- जल-स्रोतों की सफाई।
- सामुदायिक आयोजनों।
- प्राकृतिक संसाधन संरक्षण।

यह व्यवस्था आधुनिक सहभागी ग्रामीण विकास की अवधारणा से काफी हद तक साम्य रखती है। आज जब विकास योजनाओं में ग्रामसभा, स्वयं सहायता समूह, किसान समूह और सामुदायिक संस्थाओं की भूमिका बढ़ रही है, तब जनजातीय सामाजिक संगठन से महत्वपूर्ण सीख प्राप्त की जा सकती है।

जनजातीय ज्ञान और सतत् ग्रामीण विकास

सतत् विकास का मूल उद्देश्य वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों को सुरक्षित रखना है। जनजातीय ज्ञान में इस अवधारणा के कई व्यावहारिक तत्व पहले से मौजूद हैं। पारंपरिक मिश्रित कृषि, जैविक संसाधनों का पुनः उपयोग, स्थानीय बीज संरक्षण, वन-आधारित आजीविका तथा सामुदायिक संसाधन प्रबंधन पर्यावरणीय स्थिरता में योगदान कर सकते हैं। हाल के शोधों में भी छत्तीसगढ़ के जनजातीय क्षेत्रों में पारंपरिक कृषि प्रणालियों और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन को सतत् आजीविका से जोड़ने की संभावनाओं पर बल दिया गया है।

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्थानीय ज्ञान को वैज्ञानिक अनुसंधान के साथ जोड़कर ग्रामीण विकास की अधिक स्थानीयकृत और टिकाऊ रणनीति विकसित की जा सकती है।

आधुनिकता और जनजातीय ज्ञान के समक्ष चुनौतियाँ

जनजातीय ज्ञान परम्परा आज अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है:

1. **पीढ़ीगत ज्ञान-अंतर:** युवा पीढ़ी का पारंपरिक व्यवसायों एवं स्थानीय ज्ञान से दूरी बनाना ज्ञान के हस्तांतरण को प्रभावित कर रहा है।
2. **प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ता दबाव:** वनों की जैव-विविधता में परिवर्तन तथा अनियंत्रित संग्रहण पारंपरिक संसाधनों की उपलब्धता को प्रभावित कर सकता है।
3. **बाजार व्यवस्था:** लघु वनोपज का असंगठित विपणन ग्रामीण उत्पादकों को उचित मूल्य से वंचित कर सकता है।

4. **पारंपरिक ज्ञान का दस्तावेजीकरण:** अनेक स्थानीय ज्ञान-प्रणालियाँ अभी भी लिखित अथवा डिजिटल रूप में दर्ज नहीं हैं।
5. **जलवायु परिवर्तन:** वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन, तापमान वृद्धि तथा सूखे की स्थितियाँ पारंपरिक कृषि प्रणालियों के सामने नई चुनौतियाँ उत्पन्न कर रही हैं।
6. **बाहरी ज्ञान और स्थानीय ज्ञान के बीच दूरी:** कई बार विकास योजनाओं में स्थानीय समुदायों के अनुभवजन्य ज्ञान को पर्याप्त महत्व नहीं दिया जाता।

आधुनिक विज्ञान एवं जनजातीय ज्ञान का समन्वय

जनजातीय ज्ञान और आधुनिक विज्ञान को परस्पर विरोधी मानना उचित नहीं है। आधुनिक वैज्ञानिक तकनीक स्थानीय ज्ञान की उत्पादकता एवं प्रभावशीलता बढ़ा सकती है, जबकि स्थानीय ज्ञान वैज्ञानिक तकनीकों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप बनाने में सहायता कर सकता है। जैसे:

- **पारंपरिक ज्ञान:** आधुनिक कृषि विज्ञान = स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप सतत् कृषि।
- **स्थानीय वन ज्ञान:** वैज्ञानिक वन प्रबंधन = जैव-विविधता संरक्षण।
- **पारंपरिक औषधीय ज्ञान:** वैज्ञानिक परीक्षण = संभावित औषधीय अनुसंधान।
- **स्थानीय जल ज्ञान:** आधुनिक जल-विज्ञान = प्रभावी जल संरक्षण।

छत्तीसगढ़ के जनजातीय कृषकों के बीच Farmer FIRST Programme जैसी पहलों में वैज्ञानिक कृषि तकनीकों और सहभागी दृष्टिकोण का उपयोग किया गया है। हालिया अध्ययन में ऐसे हस्तक्षेपों से धान उत्पादकता एवं कृषक आय में सुधार की रिपोर्ट दी गई है।

ग्रामीण प्रबंधन के लिए सुझाव

छत्तीसगढ़ की जनजातीय ज्ञान परम्परा को ग्रामीण विकास से जोड़ने के लिए निम्न उपाय उपयोगी हो सकते हैं:

- जनजातीय ज्ञान का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण किया जाए।
- प्रत्येक जनजातीय क्षेत्र में स्थानीय कृषि एवं जैव-विविधता ज्ञान का डिजिटल अभिलेख तैयार किया जाए।
- बुजुर्ग ज्ञान-धारकों और युवा पीढ़ी के बीच संवाद कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
- स्थानीय बीज बैंक विकसित किए जाएँ।
- लघु वनोपज के स्थानीय प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को बढ़ावा दिया जाए।
- महिलाओं के पारंपरिक ज्ञान को विशेष रूप से दस्तावेजीकृत किया जाए।
- ग्रामसभा आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन को मजबूत किया जाए।
- पारंपरिक जल-संरचनाओं के पुनर्जीवन को ग्रामीण विकास योजनाओं से जोड़ा जाए।
- कृषि विस्तार सेवाओं में स्थानीय भाषा एवं स्थानीय ज्ञान को शामिल किया जाए।
- जनजातीय समुदायों के बौद्धिक संपदा अधिकारों और लाभ-साझेदारी की रक्षा की जाए।
- स्कूल एवं उच्च शिक्षा पाठ्यक्रम में स्थानीय जनजातीय ज्ञान को स्थान दिया जाए।
- पर्यटन एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में जनजातीय ज्ञान का उपयोग समुदाय की सहमति और आर्थिक लाभ के साथ किया जाए।

निष्कर्ष

छत्तीसगढ़ की जनजातीय ज्ञान परम्परा हजारों वर्षों के अनुभव, प्रयोग और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन से निर्मित सामाजिक-सांस्कृतिक संपदा है। इसमें कृषि, वन, जल, औषधि, पशुपालन, खाद्य-सुरक्षा और सामाजिक संगठन से संबंधित व्यापक ज्ञान निहित है। आज ग्रामीण विकास की अवधारणा केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित नहीं रह गई है। पर्यावरण संरक्षण, स्थानीय सहभागिता, सामाजिक न्याय, खाद्य सुरक्षा और सतत् आजीविका इसके महत्वपूर्ण आयाम हैं। इन सभी क्षेत्रों में जनजातीय ज्ञान महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

अतः छत्तीसगढ़ के ग्रामीण प्रबंधन की भावी नीति में स्थानीय ज्ञान को वैज्ञानिक ज्ञान के साथ समान महत्व देना आवश्यक है। जनजातीय समुदायों की परम्पराओं को संग्रहालयों में सुरक्षित रखने मात्र के बजाय उन्हें जीवंत ग्रामीण विकास प्रक्रिया का हिस्सा बनाया जाना चाहिए। इससे एक ऐसा विकास मॉडल निर्मित हो सकता है जो स्थानीय संसाधनों, स्थानीय संस्कृति और स्थानीय समुदाय की आवश्यकताओं पर आधारित हो। स्पष्ट है कि जनजातीय ज्ञान परम्परा छत्तीसगढ़ के अतीत की विरासत होने के साथ-साथ उसके सतत् ग्रामीण भविष्य की संभावित आधारशिला भी है।

संदर्भ सूची

1. भारत सरकार, जनगणना विभाग (2011). जनगणना 2011: छत्तीसगढ़ में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या एवं सामाजिक-आर्थिक विवरण, भारत सरकार।
2. छत्तीसगढ़ शासन, वन विभाग (2001) छत्तीसगढ़ वन नीति, 2001, छत्तीसगढ़ शासन।
3. Bhaskar, G.P. (2018). Agricultural practices among tribal farmers in Bilaspur and Surguja divisions of Chhattisgarh, India. *International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences*, 7(6), 3001–3008.
4. Painkra, V.K.; Jhariya, M.K. & Raj, A. (2015). Assessment of knowledge of medicinal plants and their use in tribal region of Jashpur district of Chhattisgarh, India. *Journal of Applied and Natural Science*, 7(1), 304–309.
5. International Council for Science (2002). Science, traditional knowledge and sustainable development. International Council for Science, Paris, France.
6. Ministry of Tribal Affairs, Government of India (2014). Report of the high level committee on socio-economic, health and educational status of tribal communities in India. Government of India, New Delhi.
7. World Bank (2004). Indigenous knowledge: Local pathways to global development. World Bank, Washington, DC.

—==00==—